International Journal of Applied Research 2016; 2(4): 267-269

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(4): 267-269
www.allresearchjournal.com
Received: 05-03-2016
Accepted: 08-04-2016

मांगे राम
गांव बालासर, तहसील रानिया, जिला–सिरसा।

Correspondence
मांगे राम
गांव बालासर, तहसील रानिया, जिला–सिरसा।

नासिरा शर्मा कृत उपन्यास 'जीरो रोड' में पाश्चात्य संस्कृति पर आर्थिक प्रभाव

मांगे राम

प्रस्तावना

नासिरा शर्मा कृत उपन्यास 'जीरो रोड' सांस्कृतिक संक्रमण से जुड़ा उपन्यास है। लेखिका ने इस संदर्भ में लिखा है। ''अफ्रीका और ग्लोबलहैल्थ की सब कमेटी के चेयरमैन डोनाल्ड पेयाने का कहना है कि यह वह देश है, जहाँ के लोगों के दिलों में अपने–अपने देशवासियों के लिए कोई रहम नहीं है और न डिमोक्रेसी के लिए कोई सम्मान। लेकिन हमारे देखने का जो भी अंदाज रहा हो, मगर हमने ही उन्हें दूसरे दुखी देशों में घुसेड़ा है। यह दोनों कथन उसके हैं, जो इशारा करता है उस सेटेलाइट इमेज एवं दूसरी स्ट्रेटिजिक हेल्प की ओर, जो अमेरिकन आर्मी ने इथोपिया को दिसम्बर माह में दी थी, जब हजारों की संख्या में इथोपियन फौजी दस्ते सोमालिया में उतरे और इस्लामिक हुकूमत का तख्ता पलट दिया। यही नहीं आम ह्यूमन राइटस वाच की रिपोर्ट 2005 को देखें कि सरकारी फौजों ने पश्चिमी इथोपिया के अल्पसंख्यक कबीले 'पुनुक' पर क्या–क्या जुल्म नहीं किये– उनके घर तोड़े लोगों को लोहे की छड़ों से मार–मार कर मौत की नींद सुलाया। देखने वालों ने तो यहां तक बताया कि कैदियों को बांधकर उनपर मिल्ट्री ट्रक तक दौडाया और जिन्होंने इन सारे अत्याचारों से पर्दा उठाया उन शोधकर्ताओं को देश निकाला मिला। क्यों नहीं सोचा जाता है कि यहाँ बात धर्म की नहीं है मगर धर्म की आड़ में सत्ता की है। बल्कि इन युद्धों में केवल मुसलमान नहीं इसाई भी मरता है और इनको न क्राइस्ट में दिलचस्पी है न रसूल में और हम तीसरी दुनिया के पिछड़े, अनपढ़ लोग इनकी योजनओं में ईंधन बन जाते हैं। धार्मिक मुखौटा लगा एक–दूसरे पर पिल पड़ते हैं।'' कहते–कहते असद की आवाज भर्रा गयी। उसका चेहरा गुस्से से तमतमा उठा।[1]

आतंकवाद के नाम पर विभिन्न देशों में सेना भेजकर विकसित देशों द्वारा उन्हें धमकाया जाता है। अमेरिका कभी लादेन को पकड़ने के नाम पर तो कभी तालिबानों के नाम पर निरीह जनता पर गोलियां बरसाता है जो सरासर अन्याय ही है –

अब बताओ कहां जाएं हम जैसे लोग? विदेश आते हैं रोजी रोटी की तलाश में तो तुम जैसे संगदिल लोगों से टकरा जाते हैं। खैर, तुम जो भी मुझे समझो मैं सिर्फ इन्सान हूं और किसी का बुरा नहीं चाहता हूं। तुम्हारा भी नहीं, जो मुझसे खुली नफरत रखता है। [2]

इस उपन्यास में राजनीतिज्ञ समाज को घुटते व आम लोगों को मरते आराम से देख रहे हैं। उनकी चीख पुकार का उन पर कोई भी असर नहीं पड़ता है। अगर उन्हें परवाह है तो सिर्फ अपनी जान बचाने और खजाने भरने की। उन्हें अपना स्वार्थ पूरा करने के लिए समाज के आम व्यक्ति की चाहे कितनी बार भी बलि क्यों न देनी पड़े। ऐसा करने में उन्हें कोई संकोच नहीं है।

मोहल्ले और शहर की सियासत से आगे निकल वह योरूपियन हिस्ट्री को कुछ और ज्यादा जानता तो इस फिल्म को अंतराष्ट्रीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में और भी गहराई से समझ सकता। [3]

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद झेल रहे सभी देशों की आम जनता राजनेताओं को ही इसका कारण मानती है, चाहे ये समस्या फिलिस्तीन –इजराईल की हो, भारत–पाकिस्तान की हो या अन्य अर्फीकी देशों की, राजनीति अपनी भूमिका को सही से नहीं निभा पा रही है–

''यार फरहाम, अब सियासत की बात कर बोर मत करो। जार्डन में भी हरदम यही सब चलता रहता है।'' साऊद सर पकड़कर बोल उठा।

''इन बातों से मुहँ भी तो मोड़ा नहीं जा सकता। जब तक इजरायल रहेगा फिलिस्तीन में मार–काट रहेगी, तब तक फिलिस्तीन में खून बहेगा। अरब चैन से नहीं रहेगा। कभी लेबनान जलेगा तो कभी सीरिया और ईरान तड़पेगा कि जाने कब बुश प्रशासन का गुस्सा कलस्टर बम बनकर बरसेगा। पूरे मिडिल ईस्ट को वार बैटिल में बदलकर रख दिया है।'' [4] फरहाम उत्तेजित हो बोला।

''और अफ्रीका में अमन है क्या? खांडा को ले लो या कीनिया को, बुरूनडी को ले लो या युगांडा को, ऊपर के कुछ देशों को छोड़कर, हर जगह जंग अफ्रीका महाद्वीप के लगातार भड़क रही है।

मिशनरी घुस चुकी है। उसने धर्म युद्ध के छोटे–छोटे रणक्षेत्र खोलने में बुश के 'हथियार बाज़ार' को मदद की है। लड़ो आपस में, मुसलमान–ईसाई लड़ो। कबीले लड़ो फिर सहारा रेगिस्तान का अकाल, भूख और सूखा... खत्म ही नहीं होता मुसीबत का सिलसिला। खबरें पढ़–पढ़कर आदमी का दिमाग खराब होता है ऊपर से यू. एन., मानव अधिकार, नाटो, अरब यूनियन किस–किस का नाम लें, ये सब कुछ नहीं कर पा रहे हैं। दरअसल हमारा वक्त इनसानी गिरावट का चरम है।'' [5]

राजनीतिज्ञों का काम केवल धार्मिक उन्माद भड़काना ही रह गया है। जबतक धर्म और राजनीति अलग नहीं होगी दंगे–फसाद जारी रहेंगे–

''शायद मैं भी अपने इस कथन से पूर्णतया सहमत नहीं हूँ मगर फिर भी नस्लवाद भी जो खामोशी से हमारे बीच सरसराता है वह गहरी ऊब पैदा करता है।'' फिर रूककर बोला, ''नस्लवाद और जातिवाद कहाँ नहीं है। इनसान जब तक नहीं बदलेगा तब तक सरकारें कैसे बदलेंगी? जो सियासत धर्म के चारों तरफ चक्कर लगाने लगी है और तरक्की की जगह फटेहाल लोग अपना धर्म बचाने की मुहिम में जुटे हैं।'' कड़वे स्वर में सिद्धार्थ बोला। [6]

लेखिका ने स्पष्ट किया है कि प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में राजनीति से संबद्ध रहता है। यह वह नीति है जिसके अनुसार राजा अपने राज्य का शासन और प्रजा की रक्षा करता है। आज देश का राजनीतिक वातावरण अत्यधिक दूषित हो चुका है जो भावना आजादी से पहले थी, वह आज समाप्त हो चुकी है।

प्रस्तुत उपन्यास में नासिरा शर्मा ने समाज के विभिन्न वर्गों की आर्थिक स्थिति पर भी प्रकाश डाला है। इस उपन्यास में या तो मध्यम वर्गीय लोग हैं या उच्च वर्गीय। अंधविश्वास, पारस्परिक कलह, मानसिक पिछड़ापन, आंतरिक उधेड़बुन व मानसिक अशांति सर्वत्र व्याप्त है। इलाहाबाद की तंग गलियां जिनमें कार तो दूर की बात है रिक्शा बड़ी मुश्किल से जाता है। वहीं दुबई जैसे शहरों की आर्थिक दशा बहुत अच्छी दर्शायी गई है। लेकिन ये सम्पन्नता भी अपने आप में एक खोखलापन लिए है। इसका एक उदाहरण देखिए–

1970 में दुबई को गल्फ कोस्ट के पार्टी में गिना जरूर जाने लगा था। मगर वास्तव में आज की शानदार स्थिति में पहुँचने के लिए कुल पैंतीस साल लगे। शुरू में तिजारत केवल भारत और ईरान से होती थी। दुबई के जहाज मोती और खजूर से भरे उनके बंदरगाहों पर पहुँचते और वहां से मसाले, चाय, कपड़े, चावल इत्यादि लेकर लौटते और जब मोती का धंधा 1940 के बाद जापान के कल्चर्ड मोतियों को विश्व बाजार में आने के कारण चौपट हो गया तो सोने ने उसकी जगह ले ली और जहाज सोना ले भारत की बंदरगाह की तरफ जाने लगे, जहाँ सोने का भाव दुबई से ज्यादा था। आज इस पोर्ट राशिद और जाबिल अली फ्रीजोन का हाल देखते बनता है। सौ से ज्यादा देशों ने यहाँ कम्पनियाँ खोल रखी हैं। कंटेनरों की लाइन लगी होती है। [7] अब तो दुबई हवाई अड्डा, दुबई इंटरनेट सिटी और दुबई मीडिया सिटी भी फ्रीजोन हो गया है। व्यापार तो अब और फले–फूलेगा। तेल का निर्यात तो 1964 में शुरू हुआ। 1971 में ब्रिटिश आर्मी चली गयी और यह इलाका, आबूधाबी, दुबई, शारजाह, अजमान, उम्मेअलकवैन फुजैराह की शक्ल में बँट गया। हर हिस्से का अलग हाकिम और यही सात हिस्से मिलकर यू.ए.ई. कहलाते हैं। यानी यूनाईटेड अरब ऐमरेटस, जो 83,600 स्क्वायर किलोमीटर में फैला है और जिसकी आबादी कुल चार मिलियन है– जिसमें बीस प्रतिशत केवल वहाँ के निवासी हैं, बाकी विदेशी। सोचकर सिद्धार्थ मुस्कुरा पड़ा।

दुबई में आर्थिक व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि कोई भी वस्तु ऐसी नहीं थी जो वहां से न मिले। आर्थिक संपन्नता के कारण उनके रहने–सहने का ढंग, खान–पान सब कुछ बहुत ही अच्छा है–

'अगर यह सेकंड हैंड कार न होती तो जाने मैं यह दो दिन कैसे गुजारता, वही कमरा, वही लोग, वही मोहल्ला, वही दफ्तर ! सोचने–समझने के लिए, आवारागर्दी के लिए यहाँ माहौल नहीं है जो इलाहाबाद की गलियों में बिना पैसे, बिना साधन के सुलभ था। वहीं फोक्ट में मिली स्वतंत्रता अब यहाँ के अनुशासन में तकलीफ दे रही है कि पान की पीक तो दूर, थूकने तक पर मनाही है। कूड़ा फेंकते, जोर–जोर से पुकारते, बात–बात पर गाली देते मत फिरो ! इतना अनुशासन और सजावट भी आदमी को दुख देने लगते हैं। बस यहाँ एक बात अच्छी है चाहे जो पहनो, चाहे जो खाओ, जहाँ चाहे फिरो उस पर कोई पाबंदी नहीं है। बड़ी–बड़ी इमारतें पीछे छूट गयीं। [8]

लेकिन कई देशों के आर्थिक हालात अच्छे नहीं थे। यहां पर लोग अपने घर बसाते उन्हें वहां से बेघर कर दिया जाता है–'देश की सियासी और आर्थिक परिदृश्य बदलते हैं और आपको वह जगह छोड़नी पड़ती है। ईयाद अपनी जगह से उठा और धीरे–धीरे कर नदी के किनारे पानी की गहराई में उतरने लगा। [9]

दुबई जैसे शहर आर्थिक प्रगति पर हैं परंतु अभी भी बहुत से देश अपनी आर्थिक विषमातओं से जूझ रहे हैं, जहाँ धनी और निर्धन में जमीन आसमान का अंतर है। पैसे की होड़ के कारण ही रामप्रसाद अपने बेटे को विदेश भेजते हैं। सिद्धार्थ एम.ए. पास युवक है लेकिन पैसे की लालसा उससे मजदूरी भी करवाती है। रमेश के माता–पिता तो उसके पैदा होने से पहले ही दुबई चले गये थे। वह कुंभ देखने भारत आकर महसूस करता है–

संघर्ष की हजार पर्त है। दोबारा भारत आकर मुझे महसूस हुआ कि मेरे मम्मी–डैडी को अपने गांव में कितना कष्ट था, जो वह अपना वतन छोड़कर बाहर गये थे। आज यहाँ आकर हर पल महसूस करता हूँ कि कम से कम यहाँ वह दौड़ तो नहीं है जो हम रोज जीने के लिए लगाते हैं ? भूख है, बेकारी है, बीमारी है, पिछड़ापन है मगर एक संतोष है, सुरक्षा है–जो हमारे पास सबकुछ होने के बाद नहीं है। हर दम एक भय पीछा करता है कि ये सब वैसा ही जमा–जमाया रहेगा जैसा आज है कि सब कुछ हमसे एक पल में छीन लिया जायेगा ?'' [10]

आर्थिक दौड़ में आगे जाने के लिए भारत ही नहीं पता नहीं कितने ही देशों के लोग दुबई में कार्यरत हैं। पाकिस्तानी बरकत उस्मान व सिद्धार्थ जब समुद्र किनारे मिलते हैं तो उस्मान व्यथित हो उठता है। उसकी मनोव्यथा का एक उदाहरण देखिए–

अब बताओ कहाँ जाएँ हम जैसे लोग ? विदेश आते हैं रोजी रोटी की तलाश तो तुम जैस संगदिल लोगों से टकरा जाते हैं। खैर, तुम जो भी मुझे समझो ! मैं सिर्फ इनसान हूँ और किसी का बुरा नहीं चाहता हूँ।

तुम्हारा भी नहीं, जो मुझसे खुली नफरत रखता है !'' बरकत उस्मान का चेहरा तमतमा उठा था। सिद्धार्थ ने उसके चेहरे को देखा मगर कुछ बोल नहीं पाया। बरकत मुड़ा फिर रूककर बड़ी जिंदा मुस्कुराहट के साथ कह उठा, ''तुम्हारा शुक्रिया ! नफरत ने हमेशा मुझे जीने की दुगनी ताकत दी है।'' [11]

विदेशों में कार्यरत भारतीय जब घर पैसा भेजते हैं तो एकदम घर की काया पलट हो जाती है लेकिन यह संपन्नता उन्हें अहंकारी भी कर देती है इस अहंकार के कारण व्यक्ति अंधा हो जाता है तथा यही अहंकार उनको बर्बादी के रास्ते पर ले जाता है।

जो बदलाव दिखा वह तो पैसे के कारण घर में आना ही था। फोन लग गया, वह भी लगना ही था। आखिर पिछले दो वर्षों से फोन लगवाने की बात चल रही थी। यह कविता के पापा भी जरा सी बात का बतंगड़ बनाने में किसी से कम नही है। आदमी को जब जिस चीज की जरूरत पड़ेगी तभी तो वह उसको लेगा। [12]

जीवन की कुछ सच्चाईयां भी लेखिका ने प्रस्तुत की है, जिनमें यह बताया गया है कि व्यक्ति पैसे की अंधी दौड़ में अगर उस जगह की संस्कृति, भाषा अपना लेता है तो फिर अपने समाज में यहाँ तक की घर–परिवार में भी विपरीत परिस्थितियों का शिकार होना पड़ता है–

हमसे अच्छा मजदूर लोग हैं। सोचने का बोलने का मौका नहीं मिलता। वे हमसे ज्यादा सुखी हैं। हम यहाँ कमाने आया है। यहाँ

का तौर–तरीका सीखा। गाँव जाओ और वही सलाम अलैकुम और इंशाअल्लाह बोलेगा तो हमारा मैडम नाराज की हम मुस्लिम हो गया मगर अब करंसी लेकर जाता है तो खुश। हमने लवमैरेज हिंदू ब्राह्मण लड़की से किया, प्रेम की खातिर धर्म से बाहर हम दोनों निकला मगर देखो वह वहीं अटकी है। घर जाकर भी मन को सुख नहीं मिलता। हम कहीं खो चुका है इस पैसा कमाने में। [13]

निश्कर्शः

आधुनिक युग में वैज्ञानिक तंत्र तथा औद्योगीकरण ने अर्थ–तंत्र को काफी प्रभावित किया है। मूल्यों के परिवर्तन से व्यक्ति भाग्यवादी न रहकर, अधिक तर्कवादी हो गया है। औद्योगिकता से परिस्थितियां कुछ इस प्रकार निर्मित हो गई हैं कि अमीर अधिक अमीर होता जा रहा है और गरीब अधिक गरीब। ऐसी विषम अर्थ स्थितियों का शिकार सबसे अधिक मध्यम वर्ग हुआ। मध्यम वर्ग की यह विडम्बना है कि वह न तो निम्नवर्ग को स्वीकारता है और न ही उच्च–वर्गीय बन पाता है। अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए कल्पनाओं का सहारा लेकर, उच्च इच्छाओं और आशाओं का आकांक्षी बन जाता है, जो कि धनाभाव के कारण अपूर्ण रहती है, जिस पर निराश होकर मध्यम वर्ग कुण्ठाओं से ग्रसित हो जाता है। अतः मध्यम वर्ग अर्थ तंत्र की चक्की में पिसता हुआ दुखी होता रहता है। स्वातंत्रयोतर साहित्य में आर्थिक कठिनाइयों से संघर्श सर्वत्र देखा जा सकता है। गरीबी और शिक्षित व्यक्ति की बेरोजगारी से उत्पन्न आर्थिक द्वन्द्व आज के साहित्य का मूल स्वर है। इस उपन्यास का मूल स्वर आर्थिक अभाव के कारण उत्पन्न संघर्श ही है। आर्थिक द्वन्द्व की धुरी पर निम्न मध्यम वर्गीय परिवार की विभीषिका, टूटन, निरूपायता का यथार्थ अंकन तथा जीवन मूल्यों की टकराहट का स्वर सुना जा सकता है, तो अर्थ के नाम पर पारिवारिक जीवन की विश्रृंखलता, जर्जरता, विकृति, अमानवीयता का चित्रण भी इस उपन्यास में देखा जा सकता है। आर्थिक विषमताएं व्यक्ति में खीझ, निराशा और क्रोध उत्पन्न कर देती है, जिससे व्यक्ति अपने अन्तस् में तो द्वन्द्वी हो ही उठता है और साथ ही बाह्य संस्थाओं के प्रति भी विद्रोही हो जाता है।

संदर्भ सूचीः

1. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...26।
2. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...227–228।
3. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...82।
4. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...41।
5. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...326।
6. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...325।
7. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...34–35।
8. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...52।
9. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...83।
10. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...85।
11. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...92।
12. नासिरा शर्मा 'जीरो रोड' पृ0...82।